सीखने और सिखाने की चाहत

यश कुमार सिंघल

कोविड-19 महामारी ने दुनिया को हैरत में डाल दिया। महामारी ने सभी को उनकी स्थिति और पृष्ठभूमि की परवाह किए बिना प्रभावित किया है। स्कूलों के बन्द होने और परीक्षाओं के रद्द होने से दुनिया भर के सौ करोड़ से भी अधिक विद्यार्थी प्रभावित हुए हैं। इस वज़ह से शिक्षा उन क्षेत्रों में से एक बन गई जिस पर इस महामारी का सबसे बुरा असर पड़ा है।

संस्थाओं ने ऑनलाइन कक्षाओं से अस्थायी राहत देने की कोशिश की है,लेकिन उनकी भी अपनी समस्याएँ हैं। विद्यार्थी भौतिक रूप से होने वाली कक्षा के व्यवहारिक अनुभवों और अपने सहपाठियों से होने वाली चर्चा से वंचित हो रहे हैं। इसके साथ ही लैपटॉप या मोबाइन आदि पर बिताने वाले समय में वृद्धि, अनसुलझे सवाल, शिक्षकों पर काम का भार और सभी तक प्रौद्योगिकी की असमान पहुँच भी प्रभावी शिक्षा के लिए चुनौती बनी है। शिक्षा-प्रणाली पर बुरा असर पड़ना शुरू हो गया क्योंकि यह प्रणाली इतनी बड़ी आपा-धापी के बीच काम करने के लिए पर्याप्त रूप से लचीली या अनुकूल नहीं है। शिक्षा-प्रणाली में आमूल-चूल परिवर्तन की ज़रूरत काफी समय से रही है। कोविड-19 से आए ठहराव में इस बारे में सोचने और बदलाव लाने का सर्वोत्तम मौका है। जैसा हम जानते हैं कि विद्यार्थियों की समस्याएँ, विद्यार्थियों से बेहतर कोई नहीं समझ सकता, इसीलिए इस मामले को हमें ही अपने हाथों में लेने की ज़रूरत है।

ऐसे समाधान ढूँढ़ना, जो काम के हों

लॉकडाउन के दौरान, मेरे विद्यालय ने एक *चेंजमेकर प्रतियोगिता* का आयोजन किया। इसमें मैंने अपने कुछ दोस्तों के साथ भाग लिया। प्रतियोगिता में हमें महामारी के दौरान सीखने की प्रक्रिया को प्रभावशाली और समावेशी बनाने के लिए एक समाधान ढूँढ़ना था। फिर इस समाधान को एक परियोजना के रूप में जजों के एक पैनल के समक्ष पेश करना था जो इसके लिए फण्ड प्रदान करते। कई दिनों के विचार-मंथन, अपने विचारों को सूचीबद्ध करने और उन उनसे प्रेरणा प्राप्त करने के बावजूद मेरी टीम और मेरे हाथ कुछ नहीं लगा।

माइक्रो–स्कूलिंग

समाधान पेश करने के आखिरी दिनों में मैंने अपने माता-पिता की मदद से *माइक्रो-स्कूलिंग* के बारे में सोचा। तर्काधार काफी सरल है : हम स्कूल नहीं जा सकते, क्योंकि अगर शहर के सभी हिस्सों से इतने सारे लोग एक जगह इकट्ठा होंगे, तो वायरस को ट्रैक करना असम्भव हो जाता है। ऐसे में हर दिन सैकड़ों व्यक्ति आसानी से इस वायरस के वाहक बन सकते हैं। इसलिए, माइक्रो-स्कूलिंग के पीछे मुख्य विचार यह आया कि - *अगर हम स्कूल जा नहीं सकते, तो स्कूल हमारे पास क्यों नहीं आ सकता?*

इसके बारे में कुछ इस तरह सोचिए। हम घर में अपने परिवार के साथ रह रहे हैं, उनके साथ बातचीत कर रहे हैं, गले लग रहे हैं...यह सब वायरस से संक्रमित होने के डर के बिना कर रहे हैं। क्योंकि हम जानते हैं कि हमारे घरों में कोई भी संक्रमित नहीं है। इसी तरह, अगर शहर को भी ऐसे छोटे हिस्सों में बाँट दिया जाए जहाँ बिलकुल या बहुत थोड़े संक्रमण के मामले आए हैं, तो उन छोटे हिस्सों या सुरक्षा के उन दायरों के भीतर हर व्यक्ति स्वतंत्र रूप से एक-दूसरे से मिल सकेगा! इस तरह, ऑनलाइन स्कूल की समस्याओं के बिना शिक्षा ज़ारी रखने के लिए एक ही मोहल्ले के विद्यार्थी और शिक्षक आवश्यक सावधानियों के साथ छोटे–छोटे समूह में मिल सकते हैं।

और सिर्फ विद्यार्थी और शिक्षक ही क्यों? हर उम्र और पृष्ठभूमि से 'शिक्षार्थी' और 'स्वयंसेवक' सीखने का एक नेटवर्क बनाने के लिए एक-दूसरे से अपने ज्ञान व कौशलों को साझा कर सकते हैं, नतीजतन, पूरे समुदाय की शिक्षा को आगे बढ़ाया जा सकता है। कक्षाएँ भी खुली हवा में आयोजित की जा सकती हैं, एक गुरुकुल की तरह एक–दूसरे के साथ चर्चा, प्रदर्शन व वार्तालाप से ज्ञान का आदान-प्रदान किया जा सकता है। और यह सब, वायरस की चिन्ता किए बगैर।

शुरुआत

परियोजना को किसी फण्ड की ज़रूरत नहीं थी, इसलिए हम *चेंजमेकर प्रतियोगिता* नहीं जीते। मेरे दोस्तों ने इसके बाद इस परियोजना में रुचि खो दी। लेकिन यह विचार मेरे मन में घर कर गया था और इसे मैंने अपने आवासीय परिसर के भीतर ही आजमाने का फैसला किया। बदलाव लाने के लिए मैं जल्दी में बनाए गूगल फॉर्म, एक साधारण पोस्टर और अपनी बहन के छोटे व्हाइटबोर्ड के साथ निकल पड़ा।

पहले पायलट सत्र में मेरे पास सिर्फ दो विद्यार्थी थे। मुझे याद है कि मैं अपने आवासीय परिसर के पार्क में खड़ा मिडिल स्कूल के दोनों बच्चों को पुन्नेट स्केयर और रक्त के प्रकार पढ़ाने की कोशिश कर रहा था। तभी प्राथमिक स्कूल की एक बच्ची आई और उन दोनों बच्चों के साथ ही बैठ गई। वह भी सीखने के लिए उत्सुक थी।

इतनी कम उम्र की लड़की को आनुवांशिकी की अवधारणा सीखते देख मुझे एहसास हुआ कि यह सब सीखने और सिखाने की चाहत से होता है। उसके उत्साह ने मुझे अगले दिन पुनः आने की प्रेरणा दी। इस बार हमारे साथ नौ विद्यार्थी थे और इसी तरह एक-एक दिन करके हमारी कक्षा का आकार बढ़ता चला गया। सत्रों की संख्या भी बढ़ने लगी। सत्रों में स्वयंसेवकों द्वारा विज्ञान, गणित और अँग्रेज़ी की पढ़ाई के साथ-साथ पेशेवरों द्वारा डिज़ाइन प्रक्रिया, वास्तुकला, जन-भाषण देने के साथ-साथ जर्मन भाषा भी सिखाई जाने लगी।

मेरा अनुभव

माइक्रो-स्कूलिंग करते कुछ हफ़्ते ही हुए थे जब मैंने राज्य सरकार द्वारा ऑनलाइन कक्षाओं पर प्रतिबन्ध लगाने सम्बन्धी समाचार पढ़ा। विद्यालयों के पूरी तरह बन्द होने पर भी विद्यार्थियों की शिक्षा चलती रहे, इस सोच के साथ मैंने कक्षा तीन से पाँच के पाठ्यक्रम के हिसाब से कुछ कक्षाओं का आयोजन किया। हमारी पहली कक्षा में केवल एक ही विद्यार्थी था। कक्षा भिन्न के बारे में थी। सत्र के दौरान ही मेरी इस छोटी कक्षा ने पास खेल रहे दो बच्चों का ध्यान आकर्षित किया। हालाँकि, पहले वे थोड़ा हिचकिचाए लेकिन उनकी जिज्ञासा उनकी हिचकिचाहट पर भारी पड़ गई और जल्द ही वे कक्षा में शामिल हो गए। इससे साबित होता है कि सीखने की चाह भी संक्रामक होती है।

मैं दिल से मानता हूँ कि यह परियोजना आपातकालीन स्थिति में शिक्षा का एक अद्भुत समाधान है और ऐसी परियोजना इस महामारी के बाद भी जारी रखी जा सकती है। मुझे उम्मीद है कि अन्य लोग भी मेरे उदाहरण का अनुसरण करेंगे और समुदाय की अन्य समस्याओं को भी हल करने का प्रयत्न करेंगे। शिकायत करने का मतलब है कि आपने समस्या की केवल पहचान की है, लेकिन हमें एक क़दम आगे बढ़कर समस्या का हल ढूँढ़ने का भी प्रयास करना चाहिए।

फिलहाल, मैं एक लेख पर कार्य कर रहा हूँ, जिससे अन्य क्षेत्रों में रह रहे विद्यार्थियों को माइक्रो-स्कूल स्थापित करने में मदद मिलेगी। इसके माध्यम से मैं शिक्षार्थियों और स्वयंसेवकों के इस फैलाव को और अधिक बढ़ाना चाहता हूँ। मैं इस बात को भी फैलाना चाहता हूँ कि *स्कूल बन्द हो सकते हैं पर सीखना बन्द नहीं हो सकता!*







यश कुमार सिंघल इवेंचर अकैडमी बेंगलूरु में हाई स्कूल के विद्यार्थी हैं। आगे चलकर वे जीवविज्ञान अनुसन्धान को अपना पेशा बनाने के लिए पढ़ाई कर रहे हैं। वे हमेशा नई चीज़ें सीखने की कोशिश करते रहते हैं और उसे औरों से बाँटते भी हैं। वे रसोई या अपने स्कूल की प्रयोगशाला में प्रयोग करने के साथ ब्लॉगिंग का आनन्द लेते हैं। उनसे **yashksschool@gmail.com** पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** सात्विका ओहरी